मोक्ष की प्रतिनिधि प्रज्ञा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। मोक्ष प्रज्ञा का जागरण है। भारतीय संस्कृति को चार भागों में बांटा गया है–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। इसी प्रकार जीवन के चार पुरुषार्थ हैं–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। जीवन सुख और दुःख दो पलड़ों में घूमता रहता है। इससे अधिक मानव सोच भी नहीं पाता। यह सब ईश्वर की सृष्टि है। सुख–दुःख से मुक्त होने के लिए प्रज्ञा जागरण की आवश्यकता होती है। प्रज्ञा के जागरण से संसार असार दिखने लगता है। हम पढ़–लिखकर के विद्वान बन सकते हैं। हमें अनेक विषयों का ज्ञान हो सकता है। हम पद और प्रतिष्ठा की प्राप्ति कर सकते हैं। किन्तु हम इससे पण्डित नहीं हो सकते। **मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिन्ना** अर्थात् संसार में जितने लोग हैं उनकी बुद्धि भिन्न–भिन्न है। एक ही विषय में सबके विचार अलग–अलग होते हैं। प्रज्ञा के जागरण से इन्द्रियातीत ज्ञान हो जाता है।

प्रज्ञा के जागृत होने के बाद अहं ब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ही ब्रह्म हूं इसकी प्रतीति होने लगती है। संसार मिथ्या प्रतीत होने लगता है। धीरे–धीरे अपने स्वरूप का ज्ञान होने लगता है। आत्मा और शरीर दूध और पानी की तरह एक में मिले हुए हैं। जब आत्मा और शरीर पृथक होते हैं तो इसी को मृत्यु कहा जाता है। शरीर पंच भौतिक है। आत्मा के निकल जाने के बाद सभी तत्व अपने मूल तत्व में मिल जाते हैं। आत्मा शाश्वत अजर और अमर है। आत्मा का ज्ञान ही मोक्ष की प्राप्ति है। यह ज्ञान प्रज्ञा के जागरण से ही होता है। इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए सद्गुरु या महापुरुष के सानिध्य की आवश्यकता होती है। सद्गुरु जीव के कषाय की थैली को निकालकर बाहर कर देता है। अनन्तानुबंधी कषाय को महापुरुष नष्ट कर देते हैं। अहंकार नष्ट हो जाता है। प्रज्ञा जागृत हो जाती है।

अज्ञा संसार में भ्रमण कराती है और प्रज्ञा मुक्ति प्रदान करती है। कार्मण शरीर का भुगतान हो जाने के बाद मुक्ति मार्ग का वरण करना चाहिए। प्रज्ञा मोक्ष की प्रतिनिधि है। प्रज्ञा अन्तःदृष्टि है। जीवन में ज्ञान प्राप्त करना और जागृत रहना आवश्यक है। कुदरत, कुदरत का कानून और कुदरत की रचना से सनातन सुख अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है। रियल, रिलेटिव, अकर्ता भाव, समभाव और पुरुषार्थ ये पांच आज्ञाएं हैं। इनकी प्राप्ति से प्रज्ञा जागृत हो जाती है। इससे ज्ञाता, दृष्टा भाव की प्राप्ति होती है। सभी प्रकार के भेद औपाधिक है। शरीर भेद के कारण है और भेद कर्मों के कारण। मोक्ष मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो यह एक बड़ा प्रश्न है। योगी हो या भोगी सभी यह चाहते है कि उनके जीवन का अन्त अच्छा हो। किन्तु अपने–अपने कर्मों के अनुसार सबको फल प्राप्त होता है और कर्मों के अनुसार ही चौरासी लाख जीव योनियों में भटकना पड़ता है।

सुख–दुःख जीवन में आने वाले दो पड़ाव हैं। अपने प्रारब्ध के अनुसार या कृत कर्मों के अनुसार सबको सुख–दुःख भोगना पड़ता है। कर्मबन्ध के पांच कारण माने गये हैं– मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। इन्हीं पांचों को बंध का कारण माना गया है। कषाय और योग को बंध का कारण कहा गया है। मिथ्यादर्शन विपरीत श्रद्धान है। मिथ्यादर्शन के कारण तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान नही होता। जीवादि पदार्थों का श्रद्धान न करना मिथ्या दर्शन है। विरति का अभाव अविरति है। हिंसा आदि पांच पापों को नहीं छोड़ना या अहिंसादि पांच व्रतों का पालन न करना अविरति है। प्रमाद का अर्थ है उत्कृष्टरूप से आलस्य का होना। क्रोधादि के कारण जीव की सत्कर्मों में रुचि नहीं होती। इसीलिए सकषाय अवस्था को प्रमाद कहा गया है।

क्रोध, मान, माया, लोभ आदि आत्मा को कुगति में ले जाने के कारण आत्मा के स्वरूप को कसते हैं, इसलिए इन्हें कषाय कहा जाता है। चारित्र परिणाम के कसने के कारण भी ये कषाय कहलाते हैं। मन, वचन और काय के द्वारा होने वाले आत्मप्रदेशों के परिस्पन्दन को योग कहते हैं। इन्हीं के कारण कर्म आत्मा से बंधते हैं। प्रायः सभी दार्शनिक मिथ्याज्ञान या अविद्या को बन्ध का कारण स्वीकार करते हैं। भारतीय दर्शन में अनेक दार्शनिक सम्प्रदाय है,

जिन्होंने बन्धन का विवेचन किया है। बन्ध होता है, इसे सभी भारतीय दार्शनिक स्वीकार करते हैं। सांख्यदार्शनिक स्वीकार करते हैं कि बन्ध पुरुष या आत्मा का नहीं, बल्कि प्रकृति का होता है। जन्ममरणरूप संसार अथवा बन्धन और मोक्ष ये सब धर्म वास्तविक में भोग्य–भोग, भोगसाधन, भोगायतनभूत अनेक पदार्थों की आश्रयस्वरूपा प्रकृति के ही हैं।

अनित्य दुःख और अनात्मभूत जगत में आत्मा को खोजना या सुख को खोजना अविद्या है। अविद्या के कारण ही जन्ममरण का चक्र चलता है। अद्वैतवेदान्त में अविद्या को बन्धन का कारण माना गया है। अविद्या के सम्बन्ध में कहा गया है– संसार के सभी प्राणी अविद्या के वशीभूत रहते हैं, जिससे उन्हें आत्मस्वरूप का ज्ञान ही नहीं हो पाता। अविद्या के कारण आत्मा में अनात्मा का अध्यास होता है, जिससे सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मतत्त्व सीमित, कर्त्ता और भोक्ता दिखायी पड़ता है। तमोगुण के प्रभाव के कारण जीव को आत्मा में अनात्मा का मिथ्याज्ञान होता है।